NCERT Solutions for Class 12 History Chapter 6 (Hindi Medium)

अभ्यास-प्रश्न
(NCERT Textbook Questions Solved)

उत्तर दीजिए (लगभग 100-150 शब्दों में)

प्रश्न 1.
उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए कि संप्रदाय के समन्वय से इतिहासकार क्या अर्थ निकालते हैं?
उत्तर:
विभिन्न संप्रदायों-धार्मिक विश्वासों एवं आचरणों का समन्वय लगभग 8वीं-18वीं शताब्दी के काल की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता थी। संप्रदाय के समन्वय से इतिहासकारों का तात्पर्य है कि इस काल में विभिन्न पूजा-प्रणालियाँ समन्वय की ओर बढ़ने लगी थीं। इस काल के साहित्य एवं मूर्तिकला दोनों से ही अनेक प्रकार के देवी-देवताओं का परिचय मिलता है। विष्णु, शिव और देवी की विभिन्न रूपों में आराधना की परिपाटी न केवल प्रचलन में रही अपितु उसे और अधिक विस्तार एवं व्यापकता भी प्राप्त हुई। देश के विभिन्न भागों के स्थानीय देवताओं को विष्णु का रूप माना जाने लगा। "महान" संस्कृत पौराणिक परम्पराओं एवं "लघु" परम्पराओं के पारस्परिक सम्पर्क के परिणामस्वरूप सम्पूर्ण देश में अनेक धार्मिक विचारधाराओं तथा पद्धतियों का जन्म हुआ।

विद्वान इतिहासकारों का विचार है कि विचाराधीन काल में पूजा-प्रणालियाँ के समन्वय के आधार में प्रमुख रूप से दो प्रक्रियाएँ कार्यशील थीं। इनमें से एक प्रक्रिया ब्राह्मणीय विचारधारा के प्रचार से संबंधित थी। पौराणिक ग्रंथों की रचना, संकलन तथा परिरक्षण ने इसके प्रसार को प्रोत्साहित किया था। पौराणिक ग्रंथों की रचना सरल संस्कृत छन्दों में की गई थी, जिन्हें वैदिक विद्या से विहीन स्त्रियाँ और शूद्र भी समझ सकते थे। दूसरी प्रक्रिया का संबंध स्त्रियों, शूद्रों तथा अन्य सामाजिक वर्गों की आस्थाओं एवं आचरणों को ब्राह्मणों द्वारा स्वीकृत किए जाने तथा उन्हें एक नवीन रूप प्रदान किए जाने से था। समन्वय की इस प्रक्रिया का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उदाहरण आधुनिक उड़ीसा राज्य में स्थित 'पुरी' में मिलता है।

बारहवीं शताब्दी तक पहुँचते-पहुँचते यहाँ के प्रमुख देवता जगन्नाथ (इसका शाब्दिक अर्थ है- संपूर्ण विश्व का स्वामी) को विष्णु का एक रूप मान लिया गया था। यह और बात है कि विष्णु के उड़ीसा में प्रचलित रूप तथा देश के अन्य भागों से मिलने वाले स्वरूपों में अनेक भिन्नताएँ देखने को मिलती हैं। देवी संप्रदायों में भी समन्वय के ऐसे अनेक उदाहरण उपलब्ध होते हैं। सामान्य रूप से देवी की पूजा-आराधना सिंदूर से पोते गए पत्थर के रूप में ही किए जाने का प्रचलन था। पौराणिक परम्परा के अंतर्गत इन स्थानीय देवियों को मुख्य देवताओं की पत्नियों के रूप में मान्यता प्रदान कर दी गई। कभी उन्होंने लक्ष्मी के रूप में विष्णु की पत्नी का स्थान प्राप्त किया तो कभी पार्वती के रूप में शिव की पत्नी को।

प्रश्न 2.
किस हद तक उपमहाद्वीप में पाई जाने वाली मस्जिदों को स्थापत्य स्थानीय परिपाटी और सार्वभौमिक आदर्शों का | सम्मिश्रण है?
उत्तर:

https://www.evidyarthi.in/

भारत में इस्लाम के आगमन के बाद होने वाले परिवर्तन शासक वर्ग तक ही सीमित नहीं रहे। उसने संपूर्ण उपमहाद्वीप में विभिन्न सामाजिक समुदायों अर्थात् किसानों, शिल्पियों, योद्धाओं आदि सभी को प्रभावित किया। एक ही समाज में रहते-रहते, हिंदू-मुसलमान एक-दूसरे के खान-पान, रीति-रिवाजों, सांस्कृतिक एवं सामाजिक परंपराओं आदि की ओर आकर्षित होने लगे। धर्मान्तिरित लोगों पर भी स्थानीय लोकाचारों का प्रभाव ज्यों-का-त्यों बना रहा। इस प्रकार स्थानीय परम्पराएँ एक सार्वभौमिक धर्म को प्रभावित करने लगीं।

उदाहरण के लिए, खोजा इस्माइली समुदाय के लोगों द्वारा कुरान के विचारों की अभिव्यक्ति के लिए देशी साहित्यिक विधा का सहारा लिया गया था। इसी प्रकार, मालाबार तट (केरल) पर बसने वाले मुस्लिम व्यापारियों ने स्थानीय मलयालम भाषा को अपनाने के साथ-साथ मातृकुलीयता तथा मातृगृहता जैसे स्थानीय आचारों को भी अपना लिया था। एक सार्वभौमिक धर्म के स्थानीय परम्पराओं के साथ सम्मिश्रण का संभवत: सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उदाहरण मस्जिद स्थापत्य के क्षेत्र में देखने को मिलता है। उपमहाद्वीप में पाई जाने वाली अनेक मस्जिदों का स्थापत्य स्थानीय परिपाटी और सार्वभौमिक आदर्शों का सराहनीय सम्मिश्रण है।

मस्जिद स्थापत्य के कुछ तत्त्व सार्वभौमिक होते हैं; जैसे-इमारत का मक्का की तरफ अनुस्थापन। इसे मेहराब (प्रार्थना का आला) तथा मिंबर (व्यास पीठ) की स्थापना से लक्षित किया जाता है। ऐसे सार्वभौमिक तत्त्व सभी मस्जिदों में समान रूप से पाए जाते थे। किन्तु मस्जिद स्थापत्य के अन्य तत्त्वों पर स्थानीय परिपाटियों का पर्याप्त प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। उदाहरण के लिए, उपमहाद्वीप में बनाई गई मस्जिदों में अनेक तत्त्वों जैसे छत और निर्माण कार्य में प्रयोग किए जाने वाले सामान में भिन्नता देखने को मिलती है। इस भिन्नता का प्रमुख कारण था, मस्जिदों के स्थापत्य का स्थानीय स्थापत्य परम्पराओं से प्रभावित होना तथा निर्माण कार्य में स्थानीय रूप से उपलब्ध निर्माण सामग्री का प्रयोग किया जाना। उदाहरण के लिए केरल, बांग्लादेश और कश्मीर की मस्जिदों के स्थापत्य पर स्थानीय स्थापत्य का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

शिखर केरल के मंदिर स्थापत्य की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता थी। अतः 13वीं शताब्दी में केरल में बनाई गई अनेक मस्जिदों की छतें शिखर के आकार की हैं। इसी प्रकार आधुनिक बांग्लादेश के जिला मैमनसिंग में 1609 ई0 में बनाई गई अतिया मस्जिद के गुम्बदों एवं मीनारों में इस्लामी स्थापत्य कला-शैली का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इस मस्जिद का निर्माण ईंटों से किया गया था। 1395 ई0 में झेलम नदी के किनारे पर बनाई गई शाहहमदान मस्जिद पर कश्मीरी स्थापत्य शैली का उल्लेखनीय प्रभाव है। यह मस्जिद कश्मीर काष्ठ (लकड़ी) स्थापत्यकला का एक प्रशंसनीय उदाहरण है। इसके शिखर और छज्जे नक्काशीदार हैं। उन्हें पेपरमैशी से सुसज्जित किया गया है। इस प्रकार यह कहना उचित ही होगा कि उपमहाद्वीप में पाई जाने वाली मस्जिदों का स्थापत्य स्थानीय परिपाटी और सार्वभौमिक आदर्शों का सम्मिश्रण है।

प्रश्न 3.
बे-शरिया और बा-शरिया सूफी परम्परा के बीच एकरूपता और अंतर, दोनों स्पष्ट कीजिए।
उत्तर:
सूफ़ीवाद कई पन्थों अथवा सिलसिलों में संगठित था। सिलसिला का शाब्दिक अर्थ है-जंज़ीर, जो शेख और मुरीद के मध्य एक निरन्तर संबंध की परिचायक है। सूफी सिलसिला को मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त किया जा सकता हैबा-शरीआ (बा-शरा) और बे-शरिया (बे-शरा)। बा-शरीआ का अभिप्राय था-इस्लामी कानून अर्थात् शरीआ का पालन करने वाले सिलसिले। बे-शरीआ का तात्पर्य था—ऐसे सिलसिले जो शरीआ में बँधे हुए नहीं थे। शरीआ की अवहेलना करने के कारण उन्हें बे-शरीआ के नाम से जाना जाता था।

https://www.evidyarthi.in

उल्लेखनीय है कि मुस्लिम समुदाय को निदेर्शित करने वाले कानून को शरीआ कहा जाता है। शरीआ कुरान शरीफ़ तथा हदीस पर आधारित है। हदीस का अर्थ है-पैगम्बर साहब से जुड़ी परम्पराएँ। पैगम्बर साहब के स्मृत शब्द और क्रियाकलाप भी इनके अंतर्गत आते हैं। अरब क्षेत्र के बाहर (जहाँ के आचार-विचार भिन्न थे) इस्लाम का प्रसार होने पर क्रियास अर्थात् सद्दशता के आधार पर तर्क तथा इजमा अर्थात् समुदाय की सहमति को भी कानून का स्रोत माना जाने लगा। बे-शरीआ और बा-शरीआ सिलसिलों में कुछ एकरूपताएँ और कुछ अंतर विद्यमान थे।

एकरूपताएँ

1. दोनों सिलसिले एकेश्वर में विश्वास करते थे। उनके अनुसार अल्लाह एक है। वह सर्वोच्च, सर्वशक्तिशली और सर्वव्यापक है।
2. दोनों अल्लाह के सामने पूर्ण आत्मसमर्पण पर बल देते थे।
3. दोनों पीर अथवा गुरु को अत्यधिक महत्त्व देते थे। 4. दोनों-इबादत अर्थात् उपासना पर अत्यधिक बल देते थे। उनके अनुसार अल्लाह की इबादत करने से ही मनुष्य संसार से | मुक्ति पा सकता था।

अंतर

1. बा-शरीआ सिलसिले शरीआ का पालन करते थे, किन्तु बे-शरीआ शरीआ में बँधे हुए नहीं थे।
2. बा-शरीआ सूफी सन्त ख़ानक़ाहो में रहते थे। खानकाह एक फ़ारसी शब्द है, जिसका अर्थ है-आश्रम। ख़ानक़ाह में पीर (सूफ़ी संत अर्थात् गुरु) अपने मुरीदों अर्थात् शिष्यों के साथ रहता था। ख़ानक़ाह का नियंत्रण शेख, (अरबी भाषा में) पीर अथवा मुर्शीद (फ़ारसी भाषा में) के हाथों में होता था।
3. बे-शरीआ सूफी संत ख़ानक़ाह का तिरस्कार करके रहस्यवादी एवं फ़कीर की जिन्दगी व्यतीत करते, उन्हें कलन्दर, मदारी, मलंग, हैदरी आदि नामों से जाना जाता था।
4. बा-शरीआ सफी सन्त गरीबी का जीवन व्यतीत करने में विश्वास नहीं करते थे। उनमें से अनेक ने सल्तनत की राजनीति में भाग लिया और सुल्तानों एवं अमीरों से मेल-जोल स्थापित किया। ऐसे सूफी संत कभी-कभी दरबारी पद भी स्वीकार कर लेते थे।

प्रश्न 4.
चर्चा कीजिए कि अलवार, नयनार और वीरशैवों ने किस प्रकार जाति प्रथा की आलोचना प्रस्तुत की?
उत्तर:
अलवार और नयनार संतों ने जाति प्रथा व ब्राह्मणों की प्रभुता के विरोध में आवाज़ उठाई। इन संतों में कुछ तो ब्राह्मण, शिल्पकार और किसान थे और कुछ उन जातियों से आए थे जिन्हें अस्पृश्य’ माना जाता था। अलवार और नयनारे संतों की रचनाओं को वेद जितना महत्त्वपूर्ण बताया गया। जैसे अलवार संतों के मुख्य काव्य संकलन नलयिरादिव्यप्रबन्धम् का वर्णन तमिल वेद के रूप में किया जाता था। इस प्रकार इस ग्रंथ का महत्त्व संस्कृत के चारों वेदों जितना बताया गया जो ब्राह्मणों द्वारा पोषित थे। वीरशैवों ने भी जाति की अवधारणा का विरोध किया।

उन्होंने पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानने से इंकार कर दिया। ब्राह्मण धर्मशास्त्रों में जिन आचारों को अस्वीकार किया गया था; जैसे-वयस्क विवाह और विधवा पुनर्विवाह, वीरशैवों ने उन्हें मान्यता प्रदान की। इन सब कारणों से ब्राह्मणों ने जिन समुदायों के साथ भेदभाव किया, वे वीरशैवों के अनुयायी हो गए। वीरशैवों ने संस्कृत भाषा को त्यागकर कन्नड़ भाषा का प्रयोग शुरू किया।

https://www.evidyarthi.in

प्रश्न 5.
कबीर और बाबा गुरू नानक के मुख्य उपदेशों का वर्णन कीजिए। इन उपदेशों का किस प्रकार संप्रेषण हुआ?
उत्तर:
कबीर के अनुसार संसार का मालिक एक है जो निर्गुण ब्रह्म है। वे राम और रहीम को एक ही मानते थे। उनका कहना था कि विभिन्नता तो केवल शब्दों में है जिनका आविष्कार हम स्वयं करते हैं। केवल जे फूल्या फूल बिन' और 'समंदरि लागि आगि' जैसी अभिव्यंजनाएँ कबीर की रहस्यवादी अनुभूतियों को दर्शाती हैं। वे वेदांत दर्शन से प्रभावित हैं और सत्य को अलख (अदृश्य), निराकर ब्रह्मन् और आत्मन् कहकर संबोधित करते हैं। दूसरी ओर इस्लामी दर्शन से प्रभावित होकर वे सत्य को अल्लाह, खुदा, हजरत और पीर कहते हैं। बाबा गुरू नानक ने भी कबीर की तरह निराकार भक्ति का प्रचार किया। उन्होंने यज्ञ, मूर्ति पूजा और कठोर तप जैसे बाहरी आडम्बरों का विरोध किया।

हिंदू और मुसलमानों के धर्मग्रंथों को भी उन्होंने नकारा। बाबा के अनुसार परम पूर्ण रब का कोई लिंग या आकार नहीं होता। उन्होंने रब का निरंतर स्मरण व नाम जप को उपासना का आधार बताया। उन्होंने संगत (सामुदायिक उपासना) के नियम निर्धारित किए जहाँ सामूहिक रुप में पाठ होता था। उन्होंने गुरुपद परंपरा की भी शुरुआत की, जिसका पालन 200 वर्षों तक होता रहा। जहाँ कबीर ने अपने उपदेशों में क्षेत्रीय भाषा का इस्तेमाल किया, वहीं गुरुनानक ने अपने विचार पंजाबी भाषा के माध्यम से
सामने रखा।

निम्नलिखित पर एक लघु निबंध लिखिए (लगभग 250-300 शब्दों में)

प्रश्न 6.
सूफी मत के मुख्य धार्मिक विश्वासों और आचारों की व्याख्या कीजिए।
उत्तर:
इस्लाम की आरंभिक शताब्दियों में धार्मिक तथा राजनीतिक संस्था के रूप में खिलाफत की बढ़ती शक्ति के विरुद्ध कुछ आध्यात्मिक लोगों का रहस्यवाद तथा वैराग्य की तरफ झुकाव बढ़ा। इन्हें सूफ़ी कहा जाने लगा। इन लोगों ने रुढ़िवादी परिभाषाओं तथा धर्माचार्यों द्वारा की गई कुरान और सुन्ना (पैगम्बर के व्यवहार) की बौद्धिक व्याख्या की आलोचना की। उन्होंने मुक्ति की प्राप्ति के लिए ईश्वर की भक्ति और उनके आदेशों के पालन पर बल दिया। उन्होंने पैगम्बर मोहम्मद को इंसान-ए-कामिल बताते हुए उनका अनुसरण करने की सीख दी। सूफ़ियों ने कुरान की व्याख्या अपने निजी अनुभवों के आधार पर की। ग्यारहवीं शताब्दी तक आते-आते सूफ़ीवाद एक पूर्ण विकसित आंदोलन था जिसका सूफ़ी और कुरान से जुड़ा अपना साहित्य था।

संस्थागत दृष्टि से सूफ़ी अपने को एक संगठित समुदाय-ख़ानक़ाह (फारसी) के इर्द-गिर्द स्थापित करते थे। ख़ानक़ाह का नियंत्रण शेख (अरबी), पीर अथवा मुर्शीद (फारसी) के हाथ में था। वे अनुयायियों (मुरीदों) की भर्ती करते थे और अपने वारिस (खलीफा) की नियुक्ति करते थे। आध्यात्मिक व्यवहार के नियम निर्धारित करने के अलावा ख़ानक़ाह में रहने वालों के बीच के संबंध और शेख व जनसामान्य के बीच के रिश्तों की सीमा भी नियत करते थे। बारहवीं शताब्दी के आसपास इस्लामी दुनिया में सूफ़ी सिलसिलों का गठन होने लगा। सिलसिला का शाब्दिक अर्थ है-जंजीर, जो शेख और मुरीद के बीच एक निरंतर रिश्ते का द्योतक है, जिसकी पहली अटूट कड़ी पैगंबर मोहम्मद से जुड़ी है।

https://www.evidyarthi.in

इस कड़ी के द्वारा आध्यात्मिक शक्ति और आशीर्वाद मुरीदों तक पहुँचता था। दीक्षा के विशिष्ट अनुष्ठान विकसित किए गए जिसमें दीक्षित को निष्ठा का वचन देना होता था, और सिर मुँड़ाकर थेगड़ी लगे वस्त्र धारण करने पड़ते थे। पीर की मृत्यु के बाद उसकी दरगाह (फ़ारसी में इसका अर्थ दरबार) उसके मुरीदों के लिए भक्ति का स्थल बन जाती थी। इस तरह पीर की दरगाह पर जियारत के लिए जाने की, खासतौर से उनकी बरसी के अवसर पर, परिपाटी चल निकली। इस परिपाटी को उर्स (विवाह, मायने, पीर की आत्मा का ईश्वर से मिलन) कहा जाता था, क्योंकि लोगों का मानना था कि मृत्यु के बाद पीर ईश्वर से एकीभूत हो जाते हैं और इस तरह पहले के बजाय उनके अधिक करीब हो जाते हैं।

लोग आध्यात्मिक और ऐहिक कामनाओं की पूर्ति के लिए उनका आशीर्वाद लेने जाते थे। इस तरह शेख का वली के रूप में आदर करने की परिपाटी शुरू हुई। कुछ रहस्यवादियों ने सूफ़ी सिद्धांतों की मौलिक व्याख्या के आधार पर नवीन आंदोलनों की नींव रखी। ख़ानक़ाह का तिरस्कार करके यह रहस्यवादी, फकीर की जिंदगी बिताते थे। निर्धनता और ब्रह्मचर्य को उन्होंने गौरव प्रदान किया। इन्हें विभिन्न नामों से जाना जाता था-कलंदर, मदारी, मलंग, हैदरी इत्यादि। शरिया की अवहेलना करने के कारण उन्हें बे-शरिया कहा जाता था। इस तरह उन्हें शरिया का पालन करने वाले (बा-शरिया) सूफियों से अलग करके देखा जाता था।

प्रश्न 7.
क्यों और किस तरह शासकों ने नयनार और सूफ़ी संतों से अपने संबंध बनाने का प्रयास किया?
उत्तर:
चोल शासकों ने नयनार संतों के साथ संबंध बनाने पर बल दिया और उनका समर्थन हासिल करने का प्रयत्न किया। अपने
राजस्व के पद को दैवीय स्वरूप प्रदान करने और अपनी सत्ता के प्रदर्शन के लिए चोल शासकों ने सुंदर मंदिरों का निर्माण कराया और उनमें पत्थर और धातु से बनी मूर्तियाँ स्थापित करवाईं। इस प्रकार, लोकप्रिय संत-कवियों की परिकल्पना को, जो जन-भाषाओं में गीत रचते व गाते थे, मूर्त रूप प्रदान किया गया। चोल शासकों ने तमिल भाषा के शैव भजनों का गायन मंदिरों में प्रचलित किया।

परान्तक प्रथम ने संत कवि अप्पार, संबंदर और सुंदरार की धातु प्रतिमाएँ एक शिव मंदिर में स्थापित करवाईं। इन मूर्तियों को मात्र उत्सव के दौरान निकाला जाता था। सूफ़ी संत सामान्यतः सत्ता से दूर रहने की कोशिश करते थे, किन्तु यदि कोई शासक बिना माँगे अनुदान या भेट देता था तो वे उसे स्वीकार करते थे। कई सुल्तानों ने ख़ानक़ाहों को करमुक्त भूमि इनाम में दे दी और दान संबंधी न्यास स्थापित किए। सूफ़ी संत अनुदान में मिले धन और सामान का इस्तेमाल जरूरतमंदों के खाने, कपड़े एवं रहने की व्यवस्था तथा अनुष्ठानों के लिए करते थे। शासक वर्ग इन संतों की लोकप्रियता, धर्मनिष्ठा और विद्वत्ता के कारण उनका समर्थन हासिल करना चाहते थे।

जब तुर्कों ने दिल्ली सल्तनत की स्थापना की तो उलेमा द्वारा शरिया लागू किए जाने की माँग को ठुकरा दिया गया था। सुल्तान जानते थे कि उनकी अधिकांश प्रजा गैर-इस्माली है। ऐसे समय में सुल्तानों ने सूफ़ी संतों का सहारा लिया जो अपनी आध्यात्मिक सत्ता को अल्लाह से उद्भुत मानते थे। यह भी माना जाता था कि सूफ़ी संत मध्यस्थ के रूप में ईश्वर से लोगों की ऐहिक और आध्यात्मिक दशा में सुधार लाने का कार्य करते हैं। शायद यही कारण है कि शासक अपनी कब्र सूफ़ी दरगाहों और ख़ानक़ाहों के नज़दीक बनाना चाहते थे।

https://www.evidyarthi.in

प्रश्न 8.
उदाहरण सहित विश्लेषण कीजिए कि क्यों भक्ति और सूफ़ी चिंतकों ने अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए विभिन्न भाषाओं का प्रयोग किया?
उत्तर:
यह सत्य है कि भक्ति और सूफ़ी चिंतकों ने अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिए विभिन्न भाषाओं का प्रयोग किया। वास्तव में भक्ति और सूफ़ी चिंतक देश के विभिन्न भागों से सम्बन्धित थे। वे किसी भाषा-विशेष को पवित्र नहीं मानते थे। उनका प्रमुख उद्देश्य जनसामान्य को मानसिक शान्ति एवं सांत्वना प्रदान करना था। अतः वे अपने विचारों को जनसामान्य तक उनकी अपनी भाषाओं में पहुँचाना चाहते थे। यही कारण था कि उन्होंने अपने उपदेशों में स्थानीय भाषाओं का प्रयोग किया। तमिलनाडु के अलवार (विष्णु के भक्त) और नयनार (शिव के भक्त) सन्तों ने अपने विचार जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए स्थानीय भाषा का प्रयोग किया। वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण करते हुए तमिल में अपने इष्टदेव की स्तुति में भजन गाते थे।

उल्लेखनीय है कि अलवार और नयनार सन्त विभिन्न जातियों से संबंधित थे। उनमें से कुछ ब्राह्मण थे, कुछ किसान, कुछ शिल्पकार और कुछ तथाकथित 'अस्पृश्य' जातियों से भी संबंधित थे, जिन्हें वर्णव्यवस्था के अन्तर्गत सबसे निचले सोपान पर रखा गया था। उन्होंने ईश्वर के प्रति व्यक्तिगत प्रेम तथा भक्ति के संदेश को स्थानीय भाषाओं द्वारा दक्षिण भारत के विभिन्न भागों में फैलाया। विभिन्न एवं स्थानीय भाषाओं में उपदेश देने के कारण उनकी रचनाओं को वेदों के समान महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। उदाहरण के लिए, अलवार सन्तों के एक मुख्य काव्य संकलन नलयिरादिव्यप्रबन्धम्' को तमिल वेद कहा जाता है। इसी प्रकार नयनार परम्परा की उल्लेखनीय स्त्री भक्त करइक्काल अम्मइयार ने जनभाषा में भक्ति गीतों की रचना करके जनमानस पर अमिट प्रभाव छोड़ा।

उत्तर भारत में भक्ति आन्दोलन के मुख्य प्रचारकों ने भी अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिए विभिन्न भाषाओं को प्रयोग किया। उन्होंने किसी भाषा विशेष को पवित्र नहीं माना और अपने विचार जनसामान्य की भाषा में प्रकट किए। उदाहरण के लिए कबीर ने अपने पदों में अनेक भाषाओं एवं बोलियों का प्रयोग किया है। उन्होंने अपने विचारों को प्रकट करने के लिए हिन्दी, पंजाबी, फ़ारसी, ब्रज, अवधी एवं स्थानीय बोलियों के अनेक शब्दों का प्रयोग किया है। उनकी कुछ रचनाओं की भाषा सन्तभाषा है, जिसे निर्गुण कवियों की खास बोली समझा जाता है। कबीर की कुछ रचनाएँ उलटबाँसी (उल्टी केही उक्तियाँ) के नाम से प्रसिद्ध हैं। उनकी रचना में उनके प्रचलित अर्थों को उल्टा कर दिया गया है। कबीर की बानियों का संकलन तीन विशिष्ट किंतु परस्पर व्यापी प्रणालियों में किया गया है।

'कबीर बीजक' का संबंध वाराणसी तथा उत्तर प्रदेश के अन्य स्थानों के कबीर पंथियों से है और 'कबीर ग्रंथावली' का राजस्थान के दादूपंथियों से। कबीर के अनेक पदों का संकलन सिक्खों के आदिग्रंथसाहिब' में किया गया है। इसी प्रकार गुरु नानक ने अपने विचार पंजाबी भाषा में 'शबद' के माध्यम से जनसामान्य के सामने रखे। वे स्वयं इन शब्दों का भिन्न-भिन्न रागों में गायन करते थे।
गुरु नानक के उत्तराधिकारी गुरु अंगद ने गुरु नानक के उपदेशों एवं शिक्षाओं को भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखने के उद्देश्य से गुरमुखी लिपि का विकास किया। सिखों के पवित्र धार्मिक ग्रन्थ गुरु ग्रन्थ साहिब में विभिन्न भाषाओं एवं बोलियों के शब्द मिलते हैं। इसमें गुरु नानक तथा उनके चार

उत्तराधिकारी गुरुओं की बानी के साथ-साथ बाबा फरीद, रविदास तथा कबीर जैसे सन्तों की बानी को भी संकलित किया गया है। मीराबाई ने अपने अंतर्मन की भावप्रवणता को अभिव्यक्त करने के लिए अनेक गीतों की रचना की। उनके गीत मुख्य रूप से ब्रज भाषा में

https://www.evidyarthi.in/

और कुछ राजस्थानी एवं गुजराती में भी लिखे गए हैं। सूफी सन्तों ने भी अपने विचारों को विभिन्न भाषाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया। चिश्ती सन्तों की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता स्थानीय भाषाओं को अपनाना था। वे समाँ में स्थानीय भाषा का प्रयोग करते थे। उल्लेखनीय है कि दिल्ली में चिश्ती सिलसिले के लोग आपस में हिंदवी में बातचीत करते थे। पंजाब में बाबा फरीद ने क्षेत्र के लोगों में अपने संदेश का प्रचार करने के लिए पंजाबी में छन्दों की रचना की थी।

उनके कुछ छन्द गुरुग्रंथ साहिब में संकलित हैं। कुछ अन्य सूफियों ने ईश्वर के प्रति प्रेम को मानवीय प्रेम के रूपक द्वारा अभिव्यक्त करने के लिए लम्बी-लम्बी कविताओं की रचना की, जिन्हें मसनवी के नाम से जाना जाता है। सूफी कविता फ़ारसी, हिंदवी अथवा उर्दू में होती थी। कभी-कभी उसमें इन तीनों भाषाओं के शब्द विद्यमान होते थे। बीजापुर (कर्नाटक) के आस-पास सूफ़ी कविता की एक भिन्न विधा अस्तित्व में आई। इसके अन्तर्गत दक्खनी (उर्दू का एक रूप) में लिखी गई छोटी-छोटी कविताएँ आती हैं।

इनकी रचना 17वीं-18वीं शताब्दियों में इस क्षेत्र में बसने वाले चिश्ती सन्तों के द्वारा की गई थी। संभवतः इन रचनाओं का गायन घर में चक्की पीसने और चरखा कातने जैसे सामान्य कामों को करते हुए महिलाओं द्वारा किया जाता था। कुछ अन्य कविताओं की रचना लोरीनामा एवं शादीनामा के रूप में की गई। विद्वान इतिहासकारों के विचारानुसार संभवतः इस क्षेत्र के सूफ़ी सन्तों को यहाँ की स्थानीय भक्ति परम्परा ने अनेक रूपों में प्रभावित किया था। लिंगायतों द्वारा कन्नड़ में लिखे गए वचनों और पंढरपुर के सन्तों द्वारा मराठी में लिखे गए अभंगों ने भी चिश्तियों को पर्याप्त सीमा तक प्रभावित किया। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि भक्ति और सूफी चिन्तकों ने अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिए विभिन्न भाषाओं का प्रयोग किया।

प्रश्न 9.
इस अध्याय में प्रयुक्त किन्हीं पाँच स्रोतों का अध्ययन कीजिए और उनमें निहित सामाजिक व धार्मिक विचारों की चर्चा कीजिए।
उत्तर:
इस अध्याय में प्रयुक्त किन्हीं पाँच स्रोतों के अध्ययन से उनमें निहित सामाजिक व धार्मिक विचारों पर इस प्रकार चर्चा की जा सकती है।

स्रोत I (चतुर्वेदी और अस्पृश्य)
से पता चलता है कि अलवार सन्त जाति व्यवस्था को निरर्थक मानते थे और जाति-पाँति के भेद-भावों में विश्वास नहीं करते थे। अपने विचारों को प्रकट करते हुए एक ब्राह्मण अलवार तोंदराडिप्पोडि ने अपने काव्य में लिखा था-"चतुर्वेदी जो अजनबी हैं और तुम्हारी सेवा के प्रति निष्ठा नहीं रखते, उनसे भी अधिक आप (हे विष्णु) उन 'दासों' को पसन्द करते हैं, जो आपके चरणों से प्रेम रखते हैं, चाहे वे वर्ण-व्यवस्था के परे हों।"

स्रोत II (शास्त्र या भक्ति)
से स्पष्ट होता है कि अलवार सन्तों के समान नयनार सन्तों ने भी ब्राह्मणों की जन्म पर आधारित श्रेष्ठता को स्वीकार नहीं किया। उनका विचार था कि शिव के अनुराग और भक्ति के बिना ब्राह्मणों का शास्त्रज्ञान, ऊँचा कुल, गोत्र सब निरर्थक है, क्योंकि ईश्वर की दृष्टि में वास्तविक महत्त्व शास्त्र-ज्ञान अथवा गोत्र और कुल का नहीं अपितु भक्ति और प्रेम का है। इन दोनों स्रोतों से यह भी पता लगता है कि अलवार सन्त विष्णु भक्त थे और नयनार सन्त शिव के उपासक

https://www.evidyarthi.in/

स्रोत III (एक राक्षसी?)
एक स्त्री शिवभक्त करइक्काले अम्मइयार की कविता से लिया गया है।
इससे पता चलता है कि, उस समय घर के अन्दर रहना, शान्त रहना और मुधर वचन बोलना स्त्री के स्वाभाविक गुण माने जाते थे। किन्तु अम्मइयार ने स्त्रियों की पारम्परिक जीवन-शैली को ग्रहण नहीं किया। वह शिव को अपनी आराध्य देव मानती थी। उसने अपने चरम लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कठोर तपस्या के मार्ग का अनुसरण किया। स्त्रीभक्तों ने अपने सामाजिक कर्तव्यों का तो परित्याग कर दिया, किंतु वे न तो किसी भिक्षुणी समुदाय की सदस्य बनीं और न ही उन्होंने किसी वैकल्पिक व्यवस्था को स्वीकार किया। स्त्रीभक्तों ने पितृसत्तात्मक आदर्शों को स्वीकार नहीं किया और अपनी जीवन पद्धति एवं रचनाओं द्वारा उन्हें चुनौती दी।

स्रोत IV (अनुष्ठाने और यथार्थ संसार)
बासवन्ना द्वारा रचित एक वचन से सम्बन्धित है। बासवन्ना वीरशैव परम्परा के संस्थापक थे। वह जाति से ब्राह्मण थे और चालुक्य राजा के दरबार में एक मंत्री थे। उनके अनुयायी वीरशैव अर्थात् शिव के वीर और लिंगायत अर्थात लिंग धारण करने वालों के नाम से प्रसिद्ध हुए। आज भी वीरशैव कर्नाटक की संभवतः सर्वाधिक लोकप्रिय परम्परा है। वीरशैव अथवा लिंगायत शिव को अपना आराध्य देव मानते हैं। वे शिव की उपासना लिंग के रूप में करते हैं। वीरशैव अथवा लिंगायत जन्म पर आधारित जाति-व्यवस्था को स्वीकार नहीं करते। उन्होंने जाति-पाँति के भेद-भावों का विरोध किया तथा समाज में कुछ समुदायों के 'पवित्र' और कुछ के दूषित होने की ब्राह्मणीय अवधारणा की कटु आलोचना की।

उनके विचारानुसार मनुष्य की श्रेष्ठता का आधार उसका जन्म नहीं अपितु कर्म होने चाहिए। लिंगायत अनुष्ठानों की अपेक्षा यथार्थ भक्ति भाव पर अधिक बल देते हैं। उनके विचारानुसार परमदेव को अनुष्ठानों द्वारा नहीं अपितु भक्तिभाव द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। धर्म से जुड़े निरर्थक रीति-रिवाजों एवं आडंबरों का विरोध करते हुए बासवन्ना ने लिखा था कि जब वे एक पत्थर से बने सर्प को देखते हैं तो उस पर दूध चढ़ाते हैं, यदि असली साँप आ जाए तो कहते हैं "मारो-मारो", देवता के उस सेवक को, जो भोजन परोसने पर खा सकता है, वे कहते हैं, "चले जाओ, चले जाओ।" किन्तु ईश्वर की प्रतिमा को, जो खा नहीं सकती, वे व्यंजन परोसते हैं।।"

स्रोत V (खम्बात का गिरजाघर)
उस फरमान (बादशाह का हुक्मनामा) का अंश है, जिसे महान मुगल सम्राट अकबर ने | 1598 ई0 में जारी किया था। सम्राट ने यह फरमान खम्बात के गिरजाघर के सम्बन्ध में जारी किया था। इससे स्पष्ट होता है कि अकबर एक उदार एवं धर्म-सहिष्णु सम्राट था। वह भारत में धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना करना चाहता था। उसने अपने पूर्ववर्ती मुस्लिम शासकों के समान धर्म के नाम पर अत्याचार अथवा रक्तपात की नीति का अनुसरण नहीं किया। उसने बलपूर्वक धर्म परिवर्तन पर प्रतिबन्ध लगा दिया तथा सभी धर्म एवं सम्प्रदायों को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान की। इस स्रोत से यह भी स्पष्ट
होता है कि कट्टर मुस्लिम सम्राट के उदार धार्मिक विचारों के विरोधी थे।

परियोजना कार्य (कोई एक)

प्रश्न 11.
इस अध्याय में वर्णित किन्हीं 2 धार्मिक उपदेशकों/चिंतकों/संतों का चयन कीजिए और उनके जीवन व उपदेशों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त कीजिए। इनके समय, कार्यक्षेत्र और मुख्य विचारों के बारे में एक विवरण तैयार कीजिए। हमें इनके बारे में कैसे जानकारी मिलती है और हमें क्यों लगता है कि वे महत्त्वपूर्ण हैं?

https://www.evidyarthi.in

उत्तरः

1. बाबा गुरु नानक-बाबा गुरु नानक (1469-1539) का जन्म एक हिंदू व्यापारी परिवार में हुआ। उनका जन्मस्थल मुख्यतः

इस्लाम धर्मावलंबी पंजाब का ननकाना गाँव था जो रावी नदी के पास था। उन्होंने फारसी पढ़ी और लेखाकार के कार्य का प्रशिक्षण प्राप्त किया। उनका विवाह छोटी आयु में हो गया था, किंतु वह अपना अधिक समय सूफ़ी और भक्त संतों के बीच गुजारते थे। उन्होंने दूर-दराज की यात्राएँ भी कीं। बाबा गुरु नानक का संदेश उनके भजनों और उपदेशों में निहित है। इनसे पता लगता है कि उन्होंने निर्गुण भक्ति का प्रचार किया। धर्म के सभी बाहरी आडंबरों को उन्होंने अस्वीकार किया; जैसे-यज्ञ, आनुष्ठानिक स्नान, मूर्ति पूजा व कठोर तप। हिंदू और मुसलमानों के धर्मग्रंथों को भी उन्होंने नकारा। बाबा गुरु नानक के लिए परम पूर्ण 'रब' का कोई लिंग या आकार नहीं था। उन्होंने इस रब की उपासना के लिए एक सरल उपाय बताया और वह था उनका निरंतर स्मरण व नाम का जाप। उन्होंने अपने विचार पंजाबी भाषा में शबद के माध्यम से सामने रखे।

बाबा गुरु नानक ये शबद अलग-अलग रागों में गाते थे और उनका सेवक मरदाना रबाब बजाकर उनका साथ देता था। बाबा गुरु नानक ने अपने अनुयायियों को एक समुदाय में संगठित किया। सामुदायिक उपासना (संगत) के नियम निर्धारित किए जहाँ सामूहिक रूप से पाठ होता था। उन्होंने अपने अनुयायी अंगद को अपने बाद गुरुपद पर आसीन किया; इस परिपाटी का पालन 200 वर्षों तक होता रहा। ऐसा प्रतीत होता है कि बाबा गुरु नानक किसी नवीन धर्म की स्थापना नहीं करना चाहते थे, किंतु उनकी मृत्यु के बाद उनके अनुयायियों ने अपने आचार-व्यवहार को सुगठित कर अपने को हिंदू और मुसलमान दोनों से पृथक् चिहनित किया। पाँचवें गुरु अर्जुन देव जी ने बाबा गुरु नानक तथा उनके चार उत्तराधिकारियों, बाबा फरीद, रविदास और कबीर की बानी को आदि ग्रंथ साहिब में संकलित किया। इनको 'गुरबानी' कहा जाता है और ये अनेक भाषाओं में रचे गए।

2. मीराबाई-मीराबाई संभवतः

भक्ति परंपरा की सबसे सुप्रसिद्ध कवयित्री हैं। उनकी जीवनी उनके लिखे भजनों के आधार पर संकलित की गई है। वह मारवाड़ के मेड़ता जिले की एक राजपूत राजकुमारी थीं जिनका विवाह उनकी इच्छा के विरुद्ध मेवाड़ के सिसोदिया कुल में कर दिया गया। मीराबाई ने अपने पति की आज्ञा की अवहेलना करते हुए विष्णु के अवतार कृष्ण को अपना एकमात्र पति स्वीकार किया। उन्हें विष देकर जान से मारने का असफल प्रयास भी किया गया। उन्होंने पति और राजभवन के ऐश्वर्य को त्याग कर विधवा के समान सफेद वस्त्र धारण कर लिया और संन्यासिनी बन गईं। कुछ परंपरा के अनुसार मीरा के गुरु रैदास थे जो एक चर्मकार थे। इससे पता चलता है कि मीरा ने अतिवादी समाज की रुढ़ियों का उल्लंघन किया। उनके भक्ति गीत अंतर्मन की भाव-प्रवणता को व्यक्त करने वाले हैं। उनके रचित पद आज भी स्त्रियों और पुरुषों द्वारा गाए जाते हैं।

प्रश्न 12.

इस अध्याय में वर्णित सूफ़ी व देव स्थलों से संबद्ध तीर्थयात्रा के आचारों के बारे में अधिक जानकारी हासिल कीजिए। क्या यह यात्राएँ अभी भी की जाती हैं? इन स्थानों पर कौन लोग और कब-कब जाते हैं? वे यहाँ क्यों जाते हैं? इन तीर्थयात्राओं से जुड़ी गतिविधियाँ कौन-सी हैं?

उत्तरः

ख्वाजा मुइनुद्दीन की अजमेर स्थित दरगाह विश्व प्रसिद्ध है। यह दरगाह मुइनुद्दीन चिश्ती की सदाचारिता और धर्मनिष्ठा तथा उनके आध्यात्मिक वारिसों की महानता और राजसी मेहमानों द्वारा दिए गए प्रश्रय के कारण लोकप्रिय थी। मुहम्मद बिन तुगलक पहला सुल्तान था जिसने इस दरगाह की यात्रा की थी। मुगल सम्राट अकबर ने यहाँ 14 बार यात्रा की।

https://www.evidyarthi.in

मुगल शहजादी जहाँआरा ने अपने पिता शाहजहाँ के साथ 1643 में अजमेर शरीफ की तीर्थयात्रा की जिसका वर्णन उसने बड़े ही ओजस्वी भाषा में किया है। 18वीं शताब्दी में दक्कन के कुली खान ने शेख नसीरुद्दीन चिराग-ए-देहली की दरगाह के बारे में मुक्का-ऐ-देहली में लिखा कि शेख सिर्फ दिल्ली के ही चिराग नहीं अपितु सारे मुल्क के चिराग हैं।

खासतौर पर रविवार के दिन यहाँ लोगों का हुजूम आता है। दीवाली के महीने में दिल्ली की सारी आबादी दरगाह पर उमड़ पड़ती है। यहाँ हिंदू और मुसलमान एक ही भावना से आते हैं। दाता गंज बक्श की दरगाह लाहौर में स्थित है। सुल्तान महमूद के पोते ने उनकी मजार पर दरगाह बनवाई है। यह दरगाह उनकी बरसी के अवसर पर उनके अनुयायियों के लिए तीर्थस्थल बन गई। आज भी हुजविरी दाता गंज बख्श के रूप में आदरणीय हैं और उनकी दरगाह को दाता दरबार कहा जाता है। अपनी यात्रा के दौरान अलवार और नयनार संतों ने कुछ पावन स्थलों को अपने इष्ट का निवास स्थल घोषित किया। इन्हीं स्थलों पर कालांतर में विशाल मंदिरों का निर्माण हुआ और वे तीर्थस्थल बन गए। अनुष्ठानों के समय इन मंदिरों में संत कवियों द्वारा भजन गाया जाता था और साथ-साथ इन संतों की प्रतिमा की भी पूजा की जाती थी।

evidyarthi

https://www.evidyarthi.in/